तीरंदाज

■ अश्विनी भटनागर

होने और दिखने के बीच

अदाकारा मीना कुमारी ट्रेजेडी क्वीन के तौर पर मशहूर हैं। उन्होंने अपने लगभग छत्तीस साल के फिल्मी सफर में सिर्फ तीन ऐसी फिल्में की थी, जो कि हलकी-फुलकी कॉमेडी फिल्में कही जा सकती हैं। उनका नाम भावुक फिल्मों से इस तरह जुड़ा था कि दर्शक सिनेमा घर में मीना कुमारी से साथ आंसू बहाने के लिए तैयार होकर जाता था। निर्माता और निर्देशक भी उनके पास वही कहानी लेकर जाते थे, जिसमें भावोत्तेजक पुट पूरा हो। मजे की बात यह है कि दुख और सहानुभूति के भाव उभारने वाली नायिका से कभी दर्शकों का मन भरा नहीं और उनकी ज्यादातर फिल्में हिट साबित हुई थीं।

'साहब बीवी और गुलाम' और 'पाकीजा' जैसी फिल्मों ने मीना कुमारी को अमर कर दिया है। दोनों ही बेहद दर्दनाक पटकथा पर आधारित थीं। 'साहब बीवी और गुलाम' में मीना कुमारी ने एक संभ्रांत बंगाली परिवार की छोटी बहू की भूमिका निभाई थी, जो अपने पति की उपेक्षा की वजह से धीरे-धीरे शराब में घुल जाती है। 'पाकीजा' में उन्होंने एक तवायफ का किरदार निभाया था, जिसकी प्यार पाने की तड़प अंजाम तक पहुंचने से पहले ही दम तोड़ देती है। दोनों ही फिल्मों में मीना कुमारी अपने पात्र का दर्द बेहद सशक्त तरीके से दर्शकों से साझा करने में कामयाब रही थीं। यह उन्हीं का हुनर था कि चाहे टीस छोटी बहू की हो या साहिबजान की, वे हर मन में आज भी घुमड़ जाती है।

मीना कुमारी की छवि एक सहनशील आदर्श भारतीय नारी की थी, जो बिना उफ किए सारे जुल्म और जिंदगी के उतार-चढ़ाव सह जाती है। एक तरह से उन्होंने अपने पूरे करिअर में सिर्फ ऐसी फिल्में की, जो परंपरागत नारी जीवन का सजीव, हृदय स्पर्शी चित्रण करती थी। छोटी बहू की भूमिका में वे जरूर मद्य में चूर नजर आई थीं, पर फिल्म के अंत में उन्होंने परंपरागत रूढ़ि को अपने अंदाज में निभाया था। अभिनय में उन्होंने न किसी और कलाकार की नकल की थी और न ही उनका कोई प्रेरणा सोत्र था। वे अनुपम थीं, अनूठी थीं।

पर आश्चर्य की बात यह है कि निजी जीवन में उनको प्रेरणा एक ऐसी शख्सियत से मिलती थी, जो उनके प्रस्तुत रूप से एकदम विपरीत थी। वास्तव में यह विश्वास कर लेना एकदम से मुश्किल है कि मीना कुमारी अमेरिकी अभिनेत्री मर्लिन मुनरो से बेहद प्रभवित थीं। मुनरो उनके जीवन में एक पोस्टर गर्ल की तरह थीं, जिनको देख कर वे रश्क करती थीं। मर्लिन मुनरो कामोत्तेजक भूमिकाए निभाती थीं और अपने व्यक्तिगत जीवन में भी वे आजाद खयाल थीं। उनका अमेरिका के राष्ट्रपति जॉन एफ कैनेडी से संबंध उसी तरह सुर्खियों में रहा था जैसे कि उनकी बेबाक प्लेबॉय मैगजीन में तस्वीरें चर्चा में रही थीं।

दोनों का रहन-सहन, पालन-पोषण एकदम अलग था। सांस्कृतिक पृष्ठभूमि भी जुदा थी। पर फिर भी मीना कुमारी मर्लिन मुनरो पर क्यों रीझ गई थीं? क्या उनकी दबी हुई शख्सियत मुनरो के जरिए अपने को जाहिर कर रही थी? क्या यही वजह थी कि मीना कुमारी ने चुपचाप अपनी निजी जिंदगी को शराब और बेलौक संबंधों के हवाले कर दिया था?

मीना कुमारी दोहरा जीवन जीने वालों में अकेली नहीं है। ज्यादातर लोग पेश कुछ और आते हैं और होते कुछ और हैं। मीना कुमारी की तरह वे अपनी प्रेरणा की चर्चा नहीं करते हैं, पर अंदर ही अंदर उनका व्यक्तित्व करवट ले रहा होता है और जब वह जगजाहिर होता है, तो आसपास वाले चौंक जाते हैं। मनोविज्ञानिकों का कहना है कि हम वह नहीं होते हैं, जो हमें हमारा माहौल बनाता है, बल्कि वह होते हैं, जो हमारा माहौल हमारे अंदर दमित करता है। परिवार, समाज, परंपरा आदि से हम बहुत कुछ सीखते हैं और इन सब सीखों का अनुकरण भी करते हैं। पर यह अनुकरण महज एक मुखौटा होता है, जिसको हम सामाजिक स्वीकार्यता पाने के लिए पहन लेते हैं। वास्तव में हम ढोंग करते रहते हैं, जिसका पर्दाफाश एक दिन अचानक हो जाता है और व्यक्ति अपनी पूर्ण नग्न अवस्था में प्रकट हो जाता है।

ऐसा होने से पहले वे अपनी दमित भावनाओं को अपने भीतर घोटता रहता है। साथ ही वह अपने प्रेरणा स्रोत की विवेचना स्वयं करता है और उसमें इतना उलझ जाता है कि रात को रात मानने को तैयार नहीं होता है। अपने सामने सारे साक्ष्य होने के बावजूद वह उनको झुठलाने पर आमादा रहता है।

एक तरह से मन ही मन जिसको हम अपना हीरो चुनते हैं, यानी जिससे प्रेरणा लेते हैं वह हमारे प्रकट व्यक्तित्व से ठीक उल्ट ही होता है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि जितना ज्यादा व्यक्ति या समाज दमित होगा उतनी ही उसकी प्रेरणा नकारात्मक रूप में बलिष्ठ होगी। वह पालनहारे में पाए जाने वाले बलिष्ठ गुण को नकार कर विध्वंसकारी प्रेरणा को तलाश कर अपना लेगा। इतिहास इस प्रवृत्ति का गवाह है। लोग और राष्ट्र इसकी आग में स्वाह होते रहे हैं।

वैसे दमित भाव उत्पन्न होने के बहुत सारे कारण हो सकते हैं, पर उसको पहचान कर सही दिशा देने की योग्यता अमूमन हम सबमें नहीं होती है। हमारी दमित मानसिकता सकारात्मक भाव को पनपने नहीं देती है। वैसे भी भावनाओं की रौ में बह जाना आसान होता है। हम उसमें बह कर अपने को मुख्यधारा में होने का आभास दिलाते रहते हैं।

वास्तव में मीना कुमारी वैसी नहीं थी जैसी वे अंततः बन गई थीं। उनमें बचपन से ही गरीब होने की कुंठा थी। कुछ सालों में वे अमीर और मशहूर हो गई थीं, पर इसके बावजूद उनकी कुंठा गई नहीं थी। वह दूसरे रूप में पनपती रही थी। उसने मर्लिन मुनरो की शक्ल अख्तियार कर ली थी। मुनरो प्रेरणा बन गई थीं- एक ऐसी प्रेरणा जिसने मीना कुमारी को न घर का रखा न घाट का। पति से अगलाव, अत्यधिक मद्यपान और बेलगाम दिलबरी ने उनकी जान ले ली थी। मुनरो भक्ति उनको ले मरी थी।

कुपोषण का दंश

रवि शंकर

विज्ञान और तकनीक एक तरफ देश में क्रांति ला रही है, तो दूसरी तरफ हम मानव के जीवन की प्राथमिक जरूरत, भूख को पूरा नहीं कर पाए हैं। यह अपार प्रगति सबके लिए भोजन का प्रबंध नहीं कर पाई है। सामाजिक और आर्थिक विकास के पैमाने पर देखें तो भारत की एक विरोधाभासी तस्वीर उभरती है। एक तरफ तो हम दुनिया के दूसरे सबसे बड़े खाद्यान्न उत्पादक देश हैं, तो दूसरी तरफ कुपोषण के मामले में तमाम कोशिशों के बावजूद स्थिति चिंताजनक है। देश अब भी गरीबी और भुखमरी जैसी समस्याओं की चपेट से बाहर नहीं निकल सका है। समय-समय पर होने वाले अध्ययन और रिपोर्ट इस बात का खुलासा करते हैं कि तमाम योजनाओं के बावजूद देश में भूख और कुपोषण की स्थिति पर लगाम नहीं लगाया जा सका है।

सरकार द्वारा व्यापक स्तर पर खाद्य सुरक्षा और गरीबी निवारण कार्यक्रम चलाया जा रहा है, पर इनसे लाभान्वित होने और लाभान्वित न होने वालों के बीच बहुत बड़ा अंतर है। देश में करीब एक तिहाई बच्चे अब भी कुपोषण का शिकार हैं। वंचित तबकों में समस्या काफी गंभीर है। हम खुश हो सकते हैं कि कुपोषण की समस्या में पिछले एक दशक के दौरान कमी आई है, लेकिन हमारी खुशी स्थायी नहीं हो सकती अगर हम समग्र तस्वीर पर नजर डालें। दरअसल, हमारे यहां कुपोषण एक महामारी की तरह बड़ी संख्या में महिलाओं और बच्चों का जीवन छीन रहा है। गंभीर और तीव्र कुपोषण ज्यादातर मामलों में जानलेवा हो सकता है। इस समस्या से निपटने के लिए हमने अभी तक कोई ठोस कदम नहीं उठाया है। या जिन उपायों को हम ठोस मान कर आगे बढ़े हैं वे इससे निपटने में कारगर नहीं हैं। हम अभी तक नीति आयोग द्वारा गंभीर कुपोषण पर समुदाय आधारित कुपोषण प्रबंधन की नीति तय नहीं कर पाए हैं।

इसका साफ मतलब है कि योजनाओं को लागू करने में कहीं न कहीं भारी गड़बड़ियां और अनियमितताएं हैं। फिलहाल जरूरत है कि भुखमरी से लड़ाई में सरकारें और वैश्विक संगठन अपने-अपने कार्यक्रमों को बेहतर और अधिक उत्तरदायित्व के साथ लागू करें।

कई रिपोर्टें साफ कहती हैं कि पर्याप्त पोषण सुनिश्चित करने में देश विफल रहा है। गौरतलब है कि भारत लंबे समय से विश्व में सर्वाधिक कुपोषित बच्चों का देश बना है। हालांकि कुपोषण के स्तर को कम करने में कुछ प्रगति भी हुई है। गंभीर कुपोषण के शिकार बच्चों का अनुपात वर्ष 2005-06 के 48 प्रतिशत से घट कर वर्ष 2015-16 में 38.4 प्रतिशत हो गया। इस अवधि में कम वजन वाले बच्चों का प्रतिशत 42.5 प्रतिशत से घट कर 35.7 प्रतिशत हो गया। साथ ही शिशुओं में रक्ताल्पता (एनीमिया) की स्थिति 69.5 प्रतिशत से घट कर 58.5 प्रतिशत रह गई, पर इसे अत्यंत सीमित प्रगति ही मान सकते हैं। भारत के लिए यह चिंताजनक बात है कि यह अपने पड़ोसी बांग्लादेश से भी शिशु मृत्यु दर में आगे है। भारत में शिशु मृत्युदर प्रति हजार सड़सठ है, जबकि बांग्लादेश में यह प्रति हजार अड़तालीस है। भारत में पांच साल से कम उम्र के कुपोषित बच्चे पैंतीस प्रतिशत हैं। इनमें भी बिहार और उत्तर प्रदेश सबसे आगे हैं। उसके बाद झारखंड, मेघालय और मध्यप्रदेश का स्थान है। मध्यप्रदेश में पांच साल से छोटी उम्र के बयालीस फीसद बच्चे कुपोषित हैं, तो बिहार में यह फीसद 48.3 है।

कुशल प्रबंधन वाले राज्यों केरल, गोवा, मेघालय, तमिलनाडु व मिजोरम आदि में स्थिति बेहतर है। जिन राज्यों में परिवार नियोजन, जन स्वास्थ्य कार्यक्रमों आदि की सरकारों द्वारा अनदेखी की जाती है, उन्हीं राज्यों में कुपोषण की समस्या सबसे ज्यादा विकट है। सवाल है कि जब देश में अपार संसाधन हैं, हम लाइलाज बीमारियों को पराजित कर रहे हैं, ऐसे में भूख का इलाज क्यों नहीं कर पा रहे हैं?

यूनीसेफ की रिपोर्ट के अनुसार भारत में कुपोषण के कारण पांच साल से कम उम्र के करीब दस लाख बच्चों की हर साल मौत हो जाती है। रिपोर्ट में कहा गया है कि कुपोषण के शिकार बच्चों की संख्या भारत में दक्षिण एशिया के देशों से बहुत ज्यादा है। एक तरफ हम मंगल ग्रह पर जीवन की खोज में मशगूल हैं, अपने पुराने सपनों के चांद पर इंसानी बस्ती बनाने की योजना भी बना रहे हैं, हम दावे करते हैं कि हम विश्व की पांचवीं और छठी अर्थव्यवस्था हैं, लेकिन हम सभी नागरिकों की भूख नहीं मिटा पाए हैं। भारत में लगभग हर चौथा बच्चा कुपोषित है। भूख का सबसे बड़ा प्रभाव बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास पर पड़ता है, जो केवल हमारे वर्तमान को ही नहीं बल्कि भविष्य की पीढ़ियों को भी प्रभावित करेगा।

सवाल है कि भारत में भुखमरी का कारण क्या है? क्या संसाधनों की कमी है? नहीं, ऐसी स्थिति कम से कम भारत में नहीं है। भारत में न तो प्राकृतिक संसाधनों की कमी है और न ही वित्तीय संसाधनों की। कमी है तो केवल प्राथमिकता की। भारत में कुपोषण और खाद्य सुरक्षा को लेकर कई योजनाएं चलाईं जाती रही हैं, लेकिन समस्या की विकरालता को देखते हुए यह नाकाफी तो थी, साथ ही व्यवस्थागत, प्रक्रियात्मक विसंगतियों और भ्रष्टाचार की वजह से भी यह तकरीबन बेअसर साबित हुई है। दरअसल, भूख से बचाव यानी खाद्य सुरक्षा की अवधारणा एक बुनियादी अधिकार है, जिसके तहत सभी को जरूरी पोषक तत्त्वों से परिपूर्ण भोजन उनकी जरूरत के हिसाब से, समय पर और गरिमामय तरीके से उपलब्ध करना किसी भी सरकार का पहला दायित्व होना चाहिए।

संदर्भ

> **भारत में भुखमरी का कारण क्या है, क्या संसाधनों की कमी है? नहीं, ऐसी स्थिति कम से कम भारत में नहीं है। भारत में न तो प्राकृतिक संसाधनों की कमी है और न ही वित्तीय संसाधनों की। कमी है तो केवल प्राथमिकता की।**

दरअसल, कुपोषण किसी भी देश या समाज के लिए मौजूदा समय में सबसे बड़ी समस्या है। भारत में कुपोषण की इतनी बड़ी समस्या है कि इससे निपटना आसान नहीं है। इसके लिए केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय पोषण मिशन का शुभारंभ किया था, जिसका लक्ष्य 2022 तक कुपोषण का समाधान करना है। पर इस सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भी भारत को अपनी वर्तमान गति को दोगुना करना होगा। निस्संदेह अगर बच्चे कुपोषित पैदा हो रहे हैं, तो एक निष्कर्ष यह भी है कि उनकी माताओं का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं है। गरीबी, अशिक्षा और अज्ञानता के चलते गर्भावस्था के दौरान जरूरी खानपान न मिल पाना कुपोषण की एक श्रृंखला को जन्म देता है।

यह ठीक है कि भारत में कुपोषण की स्थिति में पिछले वर्षों में काफी सुधार आया है, पर भारत अब भी उन देशों में शामिल है जहां विश्व के सबसे अधिक कुपोषित बच्चे निवास करते हैं। जबकि भारत के संविधान का अनुच्छेद-21 हर एक के लिए जीवन और स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार सुनिश्चित करता है। इस अनुच्छेद के तहत उपलब्ध जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार में भोजन का अधिकार सम्मिलित है। वहीं संविधान का अनुच्छेद-47 कहता है कि लोगों के पोषण और जीवन स्तर को उठाने के साथ ही जनस्वास्थ्य को बेहतर बनाना राज्य की प्राथमिक जिम्मेदारी है। इसलिए कुपोषण से निपटने के लिए केंद्र और राज्यों के बीच सभी योजनाओं में समन्वय बेहद जरूरी है। यूनिसेफ की प्रोग्रेस फॉर चिल्ड्रेन रिपोर्ट में चेतावनी देते हुए कहा गया है कि अगर नवजात शिशु को आहार देने के उचित तरीके के साथ स्वास्थ्य के प्रति कुछ सामान्य सावधानियां बरती जाएं तो भारत में हर साल पांच वर्ष से कम उम्र के छह लाख से ज्यादा बच्चों की मौत को टाला जा सकता है। उम्मीद कर सकते हैं कि कुपोषण से चौतरफा लड़ाई में उतरी केंद्र सरकार अपने लक्ष्य को समय पर हासिल कर लेगी।

यह समय है नेतृत्व दिखाने का

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

इमरान खान हर भाषण में इन दिनों कहते हैं कि भारत के प्रधानमंत्री फासीवादी राजनेता हैं, जो मुसलमानों से नफरत करते हैं। संयुक्त राष्ट्र में कही यह बात, बार-बार दोहराई अपने हर इंटरव्यू में, जो उन्होंने दुनिया के जानेमाने पत्रकारों को दिए। वतन वापस लौटे तो इस्लामाबाद के हवाई अड्डे पर अपने समर्थकों की एक विशाल सभा को संबोधित करते हुए उन्होंने यही बात फिर से कही और कश्मीर के लिए जिहाद पर निकलने के लिए उनको उकसाया। भारत के प्रधानमंत्री ने इस तरह की तकरीरों का जवाब नहीं दिया, सो भारत की लाज रखी है। लेकिन क्या जानते हैं नरेंद्र मोदी कि उनके समर्थकों में कुछ ऐसे लोग हैं जो इमरान खान के इल्जामों को साबित करने में जुटे हुए हैं देशभक्ति के नाम पर?

कुछ मंत्री हैं इनमें, कुछ भाजपा प्रवक्ता, कुछ ऐसे लोग, जो गर्व से मोदी के लिए अपनी भक्ति का इजहार करते हैं। मौका जब भी मिलता है सोशल मीडिया पर या किसी टीवी चैनल पर बात रखने का, तो मुसलमानों के लिए नफरत व्यक्त करते हैं। इतनी वाहियात हैं इनकी बातें कि मैं यहां दोहराना नहीं चाहती हूं, लेकिन इनकी तरफ प्रधानमंत्री का ध्यान जरूर आकर्षित करना चाहती हूं, क्योंकि देश के माहौल में एक अजीब कड़वाहट पैदा होने लगी है। एक तरफ हैं मोदी के हिंदुत्ववादी समर्थक, जिनको लगता है कि उनका 'टाइम आ गया है'। दूसरी तरफ हैं आम मुसलमान, जो महसूस करने लगे हैं कि उनको दूसरे दर्जे का नागरिक बनाने की कोशिश चल रही है। दूरियां बढ़ती गईं इस देश की इन दोनों सबसे बड़ी कौमों में, तो अच्छे दिनों के बदले बहुत बुरे दिन आ सकते हैं।

मोदी खुद हमेशा कहते हैं कि उनकी शक्ति आती है देश के एक सौ तीस करोड़ लोगों से, लेकिन शायद भूल रहे हैं कि इनमें कोई पचीस करोड़ मुसलमान हैं, जो धीरे-धीरे अपने आप को असुरक्षित महसूस करने लगे हैं। वैसे तो उनका अनुच्छेद 370 हटाए जाने से कोई वास्ता नहीं है, लेकिन उनका कहना है कि जब से कश्मीर का विशेष दर्जा हटाया गया है, उनमें और हिंदुओं में एक अजीब तनाव बन गया है, जो खतरनाक है। सो मोदीजी, विनम्रता से अर्ज करना चाहती हूं कि एक नजर आप इस तनाव की तरफ देने का कष्ट करें। आपके पहले शासनकाल में गोरक्षकों की हिंसा की तरफ ध्यान देने में आपने इतनी देर कर दी थी कि दलित भी बनने लगे थे गोरक्षकों की हिंसा का शिकार।

इस बार देर करने की गुंजाइश नहीं है, क्योंकि दुनिया की नजरें कश्मीर पर टिकी हुई हैं। घाटी में दो महीने से कर्फ्यू नाफिस है कई इलाकों में और अशांति अब भी इतनी है कि सेलफोन सेवाएं और इंटरनेट अभी तक बंद हैं। अनुच्छेद 370 का हटाया जाना बेशक भारत में ज्यादातर लोगों को अच्छा लगा है, लेकिन दुनिया की मीडिया में हर दूसरे दिन छप रही हैं कश्मीरियों पर अत्याचार की खबरें। सो, जब इमरान खान कहते हैं कि मोदी कश्मीर घाटी में मुसलमानों के कत्लेआम की तैयारी कर रहे हैं, दुनिया गौर से सुन रही है। हम जानते हैं कि कत्लेआम की कोई तैयारी नहीं हो रही है, लेकिन कभी न कभी तो कर्फ्यू हटेगा घाटी में और कश्मीरियों को मालूम जब होगा कि पूरे देश में मुसलमानों के खिलाफ नफरत का माहौल बना हुआ है, तो कश्मीर में अमन-शांति कैसे आएगी?

> **जो लोग नफरत फैला रहे हैं, एक तरह की गद्दारी कर रहे हैं देश के साथ। मगर करते हैं देशभक्ति के नाम पर, सो उनको न भारतीय जनता पार्टी का कोई बड़ा राजनेता रोक रहा है और न ही संघ की तरफ से उन पर लगाम कसने की कोशिश दिख रही है।**

सो, जो लोग नफरत फैला रहे हैं, एक तरह की गद्दारी कर रहे हैं देश के साथ। मगर करते हैं देशभक्ति के नाम पर, सो उनको न भारतीय जनता पार्टी का कोई बड़ा राजनेता रोक रहा है और न ही संघ की तरफ से उन पर लगाम कसने की कोशिश दिख रही है। माना कि इनको रोकना आसान नहीं है, इसलिए कि इनमें कई ऐसे लोग हैं, जिनके सत्तर साल पुराने जख्म भरे नहीं हैं। कोई इत्तेफाक नहीं है कि उत्तर भारत में आरएसएस के सबसे कट्टर समर्थक पंजाबी हैं, जो 1947 में शरार्थी बन कर आए थे पाकिस्तान से। बुजुर्गों ने अपने बच्चों को विरासत में दिए हैं अपने जख्म और उस दौर के खून-खराबे के किस्से, जिनमें खलनायक मुसलिम थे।

फिर 1990 में उन्होंने अपनी आंखों से देखा कि कैसे कश्मीर घाटी से पंडितों को भगा दिया था मुसलिम अलगवादियों ने, ऐसे कि आज तक वे अपने घर वापस नहीं जा सके हैं। ऊपर से समस्या है दुनिया भर में जिहादी आतंकवाद की, जो सबसे पहले भारत में आई थी, क्योंकि पाकिस्तान केंद्र बना रहा है इस घिनौनी जिहाद का। अगले महीने हम याद करेंगे उन लोगों को, जो बेमौत मारे गए थे 26/11 वाले हमले में मुंबई के होटलों में और बहुत बड़ी तादाद में इस महानगर के सबसे बड़े रेलवे स्टेशन पर। कहने का मतलब मेरा यह है कि कड़वाहट के कारण कई हैं, लेकिन इसको नफरत में बदलना गलत है।

नफरत जो फैला रहे हैं सोशल मीडिया पर वे तकरीबन सारे मोदी के भक्त हैं, मोदी के मतदाता भी। मोदी अगर इशारा करें कि उनको इस किस्म की नफरत पसंद नहीं है तो ज्यादा देर नहीं लगेगी माहौल को बदलने में। उनका दखल जरूरी हो गया है, क्योंकि सबसे ज्यादा बदनाम वे खुद हो रहे हैं दुनिया की नजरों में। याद आते हैं मुझे इजरायल के पूर्व प्रधानमंत्री शिमोन पैरेज के शब्द, जो उन्होंने यासीर अराफात को कहे थे, जब एक मंच पर बैठ कर अमन-शांति लाने की बातें हो रही थीं। दावोस में हुई थी उनकी यह मुलाकात और मैं हॉल में थी। अराफात ने जब कहा कि इजरायल की शर्तें फलस्तीनी लोगों को कभी मंजूर नहीं होंगी, तो पैरेज ने कहा कि नेताओं के लिए समय आता है नेतृत्व दिखाने का। मोदीजी, समय है नेतृत्व दिखाने का।

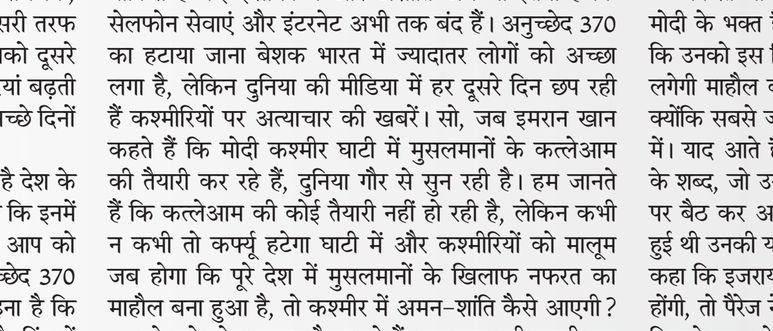

पार्टी कहां गई!

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

इस बार का दो अक्तूबर धन्य-धन्य होकर गुजरा। गांधी की एक सौ पचासवीं जयंती का दिन जो था।

चैनल पहले ही सावधान कर चुके थे कि इस दिन इतना गांधी-गांधी होगा कि सब गांधी-युक्त हो जाएंगे और भारत खुले में शौच से मुक्त हो जाएगा। और हो भी गया!

लेकिन हमारा आश्चर्य कि किसी भी चैनल को 'मदर इंडिया' की लेखिका 'मिस मेयो' याद नहीं आईं, जिन्होंने अंग्रेजों के जमाने में भारत को 'एक विशाल खुली लेवेटरी' कहा था और अब जब गांधी की महती प्रेरणा से भारत 'खुली लेवेटरी' के आरोप से मुक्त हो गया, तो किसी ने 'मेयो' को एक धन्यवाद तक न दिया कि मैडम न आप हमें इस कदर शर्मिंदा करतीं, न हम मुक्त होते।

अफसोस कि अंग्रेजी में नित्य दहाड़ने वाले एंकरों को भी नहीं मालूम दिखा कि मिस मेयो कौन थीं और उनकी किताब 'मदर इंडिया' कब आई थी? दैनिक और तुरता भाव से राजनीतिक हिसाब-किताब करने की आदत के मारे एंकरों को रोज का राजनीतिक हिसाब-किताब करने से फुरसत मिले तो कुछ पढ़ें!

इस दिन भी हिसाब-किताब किया गया। एक सौ पचासवीं मनाने की जगह एक अंग्रेजी एंकर को यह लाइन लगाना जरूरी लगा कि गांधी का असली चेला कौन है? इसी सवाल का दूसरा पहलू था कि क्या कांग्रेस गांधी की विरासत के योग्य है?

लेकिन अफसोस कि वह भक्त एंकर भी न जाने क्यों गांधी के असली चेले का नाम बताते-बताते रह गया और 'दूरारूढ़ व्यंजना' में रहने दिया।

कांग्रेस के गांधी की विरासत के अयोग्य होने के दृश्यों को तो खूब दिखाया, लेकिन 'कौन योग्य है' यह न बताया और न किसी प्रवक्ता ने एंकर को टोका कि यह बेहूदा सवाल क्यों?

गांधी का चेला होना क्या हंसी ठठ्ठा है?

दो अंग्रेजी चैनलों ने जरूर कुछ नए तरीके से स्वच्छता की गंगा में डुबकी लगाई। एक चैनल स्वच्छ से स्वस्थ तक की चर्चा-यात्रा करता रहता और साथ ही 'एंटी सेप्टिक ब्रांड' के दर्शन कराता रहता, मानो संकेत देता हो कि हे अस्वच्छ प्राणियो! अगर तुमको स्वच्छ और स्वस्थ रहना है तो इस ब्रांड का एंटी सेप्टिक इस्तेमाल करना न भूलना।

(अब यह 'एंटी सेप्टिक ब्रांड' पानी में घुल कर पानी की ऐसी तैसी करे तो करता रहे। सानू की?)

इसी तरह एक अन्य चैनल पानी बचाने की चिंता में दुबला होता रहा। एंकर और चर्चक, एनजीओ टाइप पानी विशेषज्ञ और उसके बचाओ विशेषज्ञ अपनी निर्मल अंग्रेजी में पानी बचाने की चिंता करते रहे, जिसे सुन-सुन कर हम स्वयं 'पानी पानी' होते रहे। हमारे ही जैसे मूढ़मतियों को समझाने के लिए चैनल स्क्रीन पर नल की एक टोंटी बनाई। उससे एक दो-बूंद पानी टपकता दिखाया, ताकि पानी का संकट हम सबको महसूस हो। संग में लगा दिया एक 'एंटी बैक्टीरियल ब्रांड', जिसकी महती कृपा से पानी साफ करने की विद्या दी जा रही थी, मानो संकेत से कहा जा रहा था कि हे गंदे प्राणी! समझ ले कि जल ही जीवन है। उसे अकारथ न जाने दे और सुबह जब घर का फर्श साफ करे तो इस एंटी बैक्टीरियल ब्रांड का उपयोग कर! तेरा कल्याण होगा!

यह 'एंटी बैक्टीरियल ब्रांड' पानी में घुल कर धरती और पानी का कैसा 'शुद्धीकरण' करेगा? इससे हमें क्या?

ऐसे कार्यक्रमों से आत्मबोध हुआ कि जो कारपोरेट अपने नाना ब्रांडों की नाना भांति की कृपा से अब तक पानी का बंटाढार करते रहे, वही गांधी के नाम पर पानी को फिर से साफ करने और जनता को स्वच्छ और स्वस्थ रहने के सबक सिखा रहे हैं!

> **ऐसे कार्यक्रमों से आत्मबोध हुआ कि जो कारपोरेट अपने नाना ब्रांडों की नाना भांति की कृपा से अब तक पानी का बंटाढार करते रहे, वही गांधी के नाम पर पानी को फिर से साफ करने और जनता को स्वच्छ और स्वस्थ रहने के सबक सिखा रहे हैं!**

लेकिन इंद्र भगवान को स्वच्छता का यह 'छल' मंजूर न हुआ और वे पटना पर इतना बरसे कि सारे शहर की दबी-छिपी गंदगी को ऊपर तैरा दिया और घर-घर में घुसा दिया।

इस बिडंबना को देख खबर चैनल लपके और गंदगी में खड़े होकर दिखाने लगे कि देखो यह रहा स्थानीय भाजपा के मुखिया का मकान। पानी अंदर घुसा है, लेकिन छत पर झंडा सजा है। और यह देखिए, यह रहे बिहार के उपमुख्यमंत्री जी, जिनके घर में इतना पानी घुस आया कि उनको घर से बाहर निकालना पड़ा। देखिए ये खड़े हैं शॉर्ट्स और टीशर्ट में उप-मुख्यमंत्री जी! इसके आगे एंकर सुशासन बाबू की खबर लेने लगे कि यह है सुशासन बाबू का सुशासन!

सिर्फ एक चैनल ने साफ किया कि पानी निकासी का इंतजाम देखना तो नगरपालिका का काम था, जिसमें भाजपा है। इसमें सुशासन बाबू का क्या दोष?

एक भक्त चैनल एक भक्त की 'नई पुस्तक' पर चर्चा करा रहा था और बात किसी तरह 'डाटा' पर आ टिकी, तो एक चर्चक कह उठा कि भारत में सही डाटा कभी मिलता ही नहीं। कोई किसी डाटा को गलत कहता है, तो उसे 'राष्ट्रद्रोही' करार दे दिया जाता है... अभी हमारी इकोनॉमी ढाई ट्रिलियन की है। अगर उसे पांच साल में पांच ट्रिलियन की बनाना है, तो हर बरस पंद्रह प्रतिशत की विकास दर चाहिए, जबकि आज वह सिर्फ छह प्रतिशत के आसपास है!

पता नहीं क्यों इस भक्त एंकर ने ऐसी संशयात्मा को भी एंटीनेशनल नहीं कहा! कहीं एंकर का दिल भक्तिमार्ग से कुछ हट तो नहीं रहा? इस मायालिप्त संसार में कौन आत्मा किधर लुढ़क जाए, किसे मालूम?

लेकिन वृहस्पतिवार का हमारा दिन बनाया कांग्रेस के तीन देवताओं के एक 'महाप्रश्न' ने, जिसके जन्म की कथा को एक चैनल ने अपनी स्क्रीन पर बार-बार दिखाया। सीन था : संसद भवन के साए में खड़े तीन कांग्रेसी देवता चर्चा में लीन नजर आते हैं और एक चैनल बातचीत को चुपके से रिकार्ड कर रहा है : एक पूछता है, उसको कितनी सीटें मिलीं? जवाब : 'एक', फिर कहा 'दो' फिर कहता है 'चार' फिर कहता है कि 'चौदह'... ऐसे में एक देवता पूछ उठता है : हे तात! पार्टी कहां गई?

पार्टी गई तेल लेने!